Class- B.A - Part-I (Pol science Honours) Date- 18th May 2020

Paper- I

Name of the Guest Teacher - Khushbu kumari,
dept. of Political science, V.S.J. College, Rajnagar,
Madhubani, lnmu

Topic - राज्य का स्वरूप (परिभाषा एवं विधिशास्त्रीय सिद्धांत)

राज्य के स्वरूप के संबंध में अलग-अलग विचारकों ने अपने-अपने दृष्टिकोण के अनुसार विचार किया है। राज्य के संबंध में चर्चा करते समय सर्वप्रथम यह प्रश्न आता है कि राज्य का जन्म और विकास कैसे हुआ? जैसा कि यूनानी लेखकों ने बताया है कि राज्य का जन्म मनुष्यों की मूल प्रवृत्ति का परिणाम है और इसका विकास क्रमशः हुआ है। अरस्तू का कहना है कि परिवार की वृद्धि होने से गांव बनता है और जब कई गांव मिल जाते हैं तो नगर या राज्य बन जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार राज्य स्वाभाविक संस्था न होकर कृत्रिम संस्था है तथा मनुष्य ने अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए इसे बनाया है। राज्य के स्वरूप के संबंध में अनेक सिद्धांत दिये गये हैं लेकिन इससे पहले हम राज्य की परिभाषाएँ जो अलग-अलग विचारकों द्वारा दी गयी है, उसका वर्णन करेंगे -

Scanned with CamScanner

हॉलैंड के अनुसार, राज्य बहुसंख्यक मनुष्यों का एक समुदाय है जिसके अधिकार में आमतौर पर एक भू-प्रदेश रहता है, जिसमें बहुमत की इच्छा का या बहुमत के बल पर कुछ व्यक्तियों के एक निश्चित वर्ग की इच्छा का बोलबाला उन लोगों के ऊपर रहता है जो इस इच्छा का विरोध करते हैं।

फिलमोर ने अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से विचार करते हुए राज्य की परिभाषा इस प्रकार की है — 'राज्य वह जन-समूह है जिसका एक निश्चित भू-भाग पर स्थायी अधिकार हो, जो सामान्य कानूनों, आदतों और रीति-रिवाजों द्वारा एक राजनीतिक ढंग में बँधा हो, जो एक संगठित सरकार के द्वारा स्वतंत्र संप्रभुता का उपभोग कर रहा है, जिसका नियंत्रण अपनी सीमा के भीतर के सभी व्यक्तियों और वस्तुओं पर हो, और जो युद्ध छेड़ने व शान्ति स्थापित करने तथा संसार के सभी समुदायों से सब प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध कायम करने में समर्थ हो।'

गार्नर के अनुसार, 'राजनीति-शास्त्र और सार्वजनिक कानून के विचार से राज्य ऐसे लोगों का समुदाय है जो साधारणतया बड़ी संख्या में हों, जिसका एक निश्चित भू-प्रदेश पर स्थायी अधिकार हो, जो बाहरी नियंत्रण से स्वतंत्र या लगभग स्वतंत्र हो और जिसकी एक संगठित सरकार हो तथा जिसकी आज्ञाओं का पालन अधिकांश जनता स्वभाव से करती हो।'

Scanned with CamScanner

राज्य के स्वरूप के सिद्धान्त :-

① विधिशास्त्रीय सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य को एक ऐसी संस्था माना गया है जो कानून का निर्माण करती है, उसकी व्याख्या करती तथा उसे कार्यरूप में परिणत करती है। यह स्वयं भी कानून के अनुसार और कानून के द्वारा कार्य करती है। कानून निर्माण के सम्बन्ध में राज्य की शक्ति असीम तथा उसका क्षेत्र सर्वव्यापी होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य का व्यक्तित्व कानूनी होता है। राज्य कानून की एक ऐसी वृत्ति होता है, जिसका अपना एक व्यक्तित्व होता है उसकी अपनी इच्छा होती है तथा चेतना होती है। राज्य के व्यक्तित्व की कल्पना सर्वप्रथम 19वीं सदी के जर्मन लेखकों स्टाल, स्टीन, गार्नर आदि विद्वानों ने की थी।

आलोचना — इस सिद्धान्त की प्रो. डिग्विट ने आलोचना करते हुए कहा है कि, "राज्य के व्यक्तित्व की कल्पना एक आध्यात्मिक भावना है और पुराने विद्वानों के विचारों पर निर्भर है, जिनका आज कोई मूल्य नहीं है।"

लॉफर ने कहा है कि "राज्य के कानूनी व्यक्तित्व की बात कोरी कल्पना है इसे कोई वास्तविक शक्ति या अधिकार देने की बात नितान्त अनुचित है।"

Scanned with CamScanner

महत्व :- विधिशास्त्रीय सिद्धान्त का महत्व यह है कि इससे हमें राज्य के स्वरूप को समझने में आसानी हो जाती है। यदि हम ध्यानपूर्वक देखें तो कई बातों में राज्य का स्वरूप व्यक्ति जैसा ही दिखायी देता है। इसमें सन्देह नहीं कि राज्य में भी व्यक्ति जैसी कई विशेषताएँ देखने को मिलती है। जैसे कि, राज्य की सम्पत्ति होती है, जिसे वह खरीद और बेच सकता है। राज्य अन्य पर मुकदमा चलाता है और उस पर भी मुकदमा चलाया जा सकता है। अतः यह मानना होगा कि राज्य का अपना एक अस्तित्व है।

Khushbu kumari
dept. of Political science
V.S.J. College, Rajnagar,
Madhubani, LNMU

Scanned with CamScanner